चौथा अध्याय

कुसुम कुमार और नादिरा ज़हीर बब्बर के नाटकों में स्त्री-विमर्श

4.1 स्त्री विमर्शः आशय एवं परिप्रेक्ष्य

हिन्दी साहित्य जगत में स्त्री-विमर्श एक ऐसी चर्चित संकल्पना रही है जो नारी जीवन एवं अस्तित्व को लेकर कई प्रश्न खडी करती है। सदियों से अपने ज़मीन तलाशती स्त्री के अनंत विस्तार की चाहत स्त्री-विमर्श में समायी हुई है। 'स्त्री-विमर्श वह दौर है जब स्त्री-स्वतंत्रता, स्त्री-शक्ति की पहचान, स्त्री-की अपने स्वतंत्र अस्तित्व व व्यक्तित्व को पहचान, स्त्री की इच्छा आकांक्षा, स्त्री अधिकारों के प्रति चेतना तथा परंपरा पोषित अवधारणाओं पर उनके द्वारा खडे किये सवालों पर स्त्रीयाँ और साथ ही साथ पुरुष भी खूलकर चर्चा करते है। स्त्री-विमर्श की मुखर पहल करने वाले व्यक्तियों में से एक श्री राजेन्द्र यादव लिखते है कि- "कभी हमने कहा था कि सबसे पहले तो स्त्री को देह के स्तर पर मुक्त होना पडेगा, क्योंकि नैतिकता, संस्कृति, धर्म, देह सुचिता के सारे बंधन स्त्री देह को लेकर ही है। यहाँ इस बात में भी कोई अंतर्विरोध नहीं कि दुनिया के सारे परिवर्तन पहले विचार के स्तर पर ही घटित होते है। इसके बाद ही व्यवहार जगत तक आते है।"[1] बदले हुए समय ने कई भ्रमों और रूढ़ियों को दूर कर दिया है जिसका परिणाम यह हुआ कि पहले की अपेक्षा स्त्री-मुक्ति-चेतना-और स्त्री-पराधीनता संबंधी विचार न सिर्फ व्यापक हुए है बल्कि गहरे और जटिल भी गये है। ऐसा कह सकते है कि बदलते हुए समय एवं परिवेश के साथ-साथ जीवन और जीवन दृष्टि भी बदलती जा रही है, जहाँ 'स्त्री-विमर्श' एक स्वाभाविक परिणाम रह गया है। स्त्री-विमर्श की शाब्दिक संरचना में 'स्त्री' और 'विमर्श' दो शब्दों का मेल है। स्त्री शब्द नारी का पर्यायवाची शब्द है, जिसका अर्थ पौराणिक संदर्भों से अनुप्रणित है। 'स्त्री' शब्द का कोशगत अर्थ है-

---

[1] समाधान माँगता स्त्री-विमर्श - राजेन्द्र यादव, हंस मासिका, नवंबर 2009, पृ.6

"औरत (शरीर रचना, स्वभाव आदि के कारण स्त्रियों के चार भेद है- पदिमनी, चित्राणी, शंखिनी, हस्तिनी) पत्नी, मादा पशु, सफेद चींटी, दीमक, एक वृत्त।"[2] 'विमर्श' का शाब्दिक अर्थ है विचार, विवेचन, आलोचन, परीक्षा, जांच। 'विमर्श' के लिए अंग्रेज़ी में Deliberation, Consultation आदि शब्द प्रयुक्त है। 'विमर्श' शब्द का कोशगत अर्थ है-"विवेचन, परीक्षण, समीक्षा, गुण-दोष की मीमांसा, परामर्श तर्क, ज्ञान चरमबिन्दु आदि।"[3] 'स्त्री-विमर्श' का शाब्दिक अर्थ होता है स्त्री से संबंधित विचार या विवेचन, परामर्श या चर्चा। स्त्री विमर्श अर्थात् स्त्री-जीवन से जुडे महत्वपूर्ण वस्तुओं की चर्चा, विचार विमर्श, विचार विनिमय के माध्यम से स्त्री के जीवन संघर्ष एवं अस्तित्व पर मंथन करना। "आज नारी अपने अस्तित्व की सुरक्षा के लिए परंपरागत मूल्यों से लड रही है। वह धीरे-धीरे महसूस करने लगी है कि इन्सान के रूप में उसका भी निजी व्यक्तित्व है।"[4] इस प्रकार स्त्री विमर्श अपने व्यक्तित्व को महसूस करनेवाले आधी आबादी के अधिकारों, विचारों एवं सपनों का विमर्श है। नारी-विमर्श का बुनियादी आधार है- नारी की पहचान, नारी स्वतंत्रता अथवा मुक्ति अर्थात, नारी की पहचान को संबंधों से परे एक व्यक्ति की पहचान के रूप में स्थापित करना। "स्त्री-विमर्श एक नारी वादी सिद्धांत है जो स्त्री केन्द्रित ज्ञान में चर्चा करता है।"[5]

---

[2] बृहद कोश, ज्ञानमंडल लिमिटड, वाराणसी, पृ.1313

[3] बृहद कोश, ज्ञानमंडल लिमिटड, वाराणसी, पृ.1059

[4] राष्ट्रवाणी, सितंबर-अक्टूबर-2010, पृ.32

[5] स्त्री-विमर्श- विनय कुमार पाठक, पृ.21

आधुनिक संदर्भों में स्त्री-विमर्श का अर्थ है, वर्तमान निश्चित सामाजिक संदर्भों में स्त्री-जीवन के विषय के इर्द गिर्द होता-ऐसा विचार विनिमय कि उसके द्वारा कोई मान्यता-व्याख्या या तथ्य को भाषा के माध्यम से साहित्य में प्रतिबिंबित करना। वर्तमान स्त्री विमर्श से संबद्ध स्त्रीवादी लेखिका रमणिका गुप्ता का कहना है कि- "दरअसल हमारा मध्यवर्गीय समाज घोर वर्जनाओं, अंधविश्वासों और रूढियों का पोषक है खासकर स्त्रियों के प्रति वह बहुत ही कुंठित, रूढ और रहस्यवादी....स्त्री विमर्श में यथा स्थिति को तोडने के लिए खुलकर विमर्श हो रहा है तो उस में हर्ज ही क्या है? जितना खुलकर विमर्श होगा उतनी ही वर्जनायें टूटेंगी।"[6] सामान्य रूप से नवें दशक के लेखक और लेखिकाओं द्वारा 'स्त्री-विमर्श' शब्द का प्रयोग किया-गया जो स्त्री शाक्तीकरण के क्षेत्र में एक विशेष पदावली है। डॉ.नमिता सिंह का कहना है- हम जब स्त्री-विमर्श की बात करते है तो उसका अर्थ सामाजिक विकास की प्रक्रिया से जुडा होता है। किसी भी समाज के विकास का स्तर वहाँ नारी समाज की स्थिति से ही आंका जा सकता है।"[7] अतः कह सकते है कि नारी विमर्श से तात्पर्य नारी के बारे में सोच-विचार, समाज में उसकी स्थिति क्या है आदि नारी संबंधी विविध बातों पर चर्चा करना समाज में उसकी स्थिति क्या है, कैसी हो उसके बारे में सलाह-मशविरा करना ही नारी-विमर्श है।

नारी अपनी विषम सामाजिक स्थितियों में जकडी हुई थी कि पुरुष प्रधानता, रूढियों की कट्ठरता, शिक्षा का अभाव आदि के कारण वह अपना स्वत्व खो चुका था। अन्याय मूलक व्यवस्था के प्रचलित आदर्शों, मान्यताओं, विश्वासों तथा बंधनों

---

6 संबोधन त्रैमासिक- डॉ. रमणिका गुप्ता, अक्तूबर-2004, पृ.171

7 संबोधन त्रैमासिक- डॉ. नमिता सिंह, अक्तूहर-2005, पृ.156

से नारी को मुक्त करने का प्रयास हुआ था जिसका स्पष्ट प्रमाण है नारी मुक्ति आंदोलन। नारी मुक्ति आंदोलन की शुरुआत स्वाभाविक रूप से ही पश्चिम से ही शुरू हुई थी। पश्चिमी देशों में भी नारी की स्थिति प्राचीन काल से गौण और पुरुष प्रधान समाज-व्यवस्था से निर्मित अन्याय, अत्याचार, शोषण का शिकार थी। नारी स्थिति में सुधार हो, उसे मनुष्य के रूप में सम्मान, गौरव मिले इस हेतु से उन्नींसवी सदी में पश्चिमी देशों के कई नारीवादी बुद्धिजीवियों, समाज सुधारकों, महिला कार्यकताओं एवं समाज चिंतकों ने प्रयास शुरू किये थे। सर्वप्रथम सन, 1674 ई. में मार्गरेट ब्रिटेन ने मरीलांड विधान सभा में नारी के लिए मताधिकारी की माँग की। मेरी वालस्टोन क्राफ्ट ने सन् 1972 ई.में 'द व्हिंडिकेशन आफ राईट्स ऑफ विमेन' नामक पुस्तक लिखी थी। प्रस्तुत पुस्तक को प्रथम नारी वादी रचना तथा मेरी वालस्टोन क्रफ्ट को नारी मुक्ति आंदोलन की सूत्रधार कहा जाता है। उनके अनुसार स्त्रियाँ बौद्धिक स्तर पर पुरुषों के समान होती है। उन्होंने नारी के अधिकारों के लिए आवाज़ उठाई थी तथा विपरीत परिस्थितियों में भी अदम्य साहस दिखाया था। कैरोलिन नार्टन, महिलाओं को पुरुष समान अधिकार की माँग को लेकर आंदोलन शुरू किया था। ब्रिटेन के प्रसिद्ध विचारक जान स्टूवर्ट मिल ने अपनी पुस्तक 'द सब्जेकशन ऑफ विमेन' में नारी विमर्श की चर्चा की थी। उन्होंने इंग्लैंड के हाउस ऑफ कॉमन्स में सन 1867 ई. में महिला मताधिकार के पक्ष में भाषण देकर नारी के लिए मताधिकार की माँग की थी। वह नारी शिक्षा पर विशेष बल देते है। फ्रांसीसी लेखिका सीमोन द बौउवार ने अपने पुस्तक द सेकेंड सेक्स में वह नारीपन से मुक्ति पाने के बारे में कहती है। उनके अनुसार स्त्री पैदा नही होती बनाई जाती है। लंडन में कार्यरत सेफ्रेजेट आंदोलन' से नारी संबंधी सोच-विचार में परिवर्तन शुरू हुआ

था। सन 1960 ई. के बाद ब्रिटेन के नारी मुक्ति आंदोलन की हिस्सा बनी शीला रॉबॉथम ने अपने अनुभवों को चित्रित किया है और नारी मुक्ति पर ज़ोर दिया है। उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि पश्चिमी नारी मुक्ति आंदोलन एक सामाजिक आंदोलन है। इस आंदोलन में नारियों पर होनेवाले अन्याय, शोषण तथा अत्याचार के विरुद्ध आवाज़ तथा एक स्वस्थ, नारी-स्वतंत्रता से भरे संसार की स्थापना भी प्रभुख लक्ष्य रहे है।

पश्चिमी नारी मुक्ति के आंदोलन से प्रभावित होकर भारतीय नारी मुक्ति आंदोलन ने अपनी राह ली। "सन् 1975 में स्त्री दशक की घोषणा होने के बाद भारतीय नारी के अपने एक विशेष नारी मुक्तिवाद का जन्म हुआ, नारी की स्थिति पर विशेष पर विशेष चिंतन की शुरूआत हुई। नारी मुक्ति आंदोलन ने अपने प्रति होनेवाले शोषण अन्याय और छल के विरुद्ध स्त्री को सजग करने के प्रयत्न किये है।"[8] लेकिन पश्चिमी नारी के जैसे भारतीय नारी ने पुरुष के विरुद्ध अपने अधिकार के लिए संघर्ष नहीं किया बल्कि पुरुष उसके सहयोगी तथा मार्गदशक रहे। स्वाधीनता संग्राम इसका स्पष्ट उदाहरण है। नवजागरण काल के दौरान स्त्री मुक्ति की दिशा में किये गये प्रयासों तथा भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में महिलाओं के योगदान व उनके बलिदान के पुनस्वरूप जहाँ एक ओर हमारा देश विदेशी पराधीनता से मुक्त हुआ वही दूसरी ओर स्त्रीयों ने भी अपनी दासता की स्थिति को पहचानकार उसके खिलाफ आवाज़ उठाना शुरु कर दिया था। राष्ट्र और मानव समाज की प्रगति का नींव नारी मुक्ति पर है। इस संबंध में प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी जी ने अंतर्राष्ट्रीय

---

[8] आधुनिक कथा साहित्य में नारी स्वरूप और प्रतिभा - सुभा चिटणीस

महिला वर्ष के संदेश में कहा था, "नारी स्वतंत्रता भारत के लिए विलासिता नहीं है। अपितु राष्ट्र की भौतिक, वैचारिक और आत्मिक संतुष्टि के लिए अनिवार्य बन गयी है।"[9] भारतीय स्त्री मुक्ति आंदोलन के इतिहास से यह पता चलता है कि 19 वीं सदि के बाद भारतीय स्त्रियों में अपनी उन्नती की प्रबल आकांक्षा पैदा हो गयी भी। सामाजिक मूल्यों के साथ उसमें व्यक्तिमूल्य और अपना अस्तित्व मूल्य उभरने लगा है। भारतीय स्वाधीनता संग्राम में नारी का योगदान महत्वपूर्ण रहा है। श्रीमती सरोजिनी नायडू के नेतृत्व में महिलाओं को मताधिकार की मांग कर (1917 ई) राजनीति में सक्रिय भाग लेने का प्रयत्न किया। ऐनी बसन्ट और सिस्टेर निवेदिता ने नारी शिक्षा के द्वारा जागृति लाने का बीडा उठाया। यह शिक्षा केवल जानकारी तक सीमित न होकर अंग्रेज़ी शासन की दासता के विरुद्ध जागरण की शिक्षा भी थी। मद्रास में श्रीमती मागरिड कजिन्स ने सन् 1917 ई. में अखिल भारतीय स्तर पर एक महिला संगठन इंडियन विमन्य असोसियेशन की स्थापना की और नारी सुधार को आगे बढाया है। चुनाव लडने के अधिकार कुछ शर्तों पर मिलने के बाद सन् 1926 ई में भारत में पहली बार नारी ने चुनाव में भाग लेकर सफलता पाई। सन् 1927 ई. में 'अखिल भारतीय महिला सम्मेलन संगठन' की स्थापना हुई। नमक सत्याग्रह, भारत छोडो आंदोलन, दूसरा सत्याग्रह आदि में नारी ने महत्वपूर्ण योगदान दिया था। दूसरे सत्याग्रह आंदोलन में गाँधीजी ने आह्वान किया था- "अब तो मैं दावे के साथ कह सकता हुँ कि इस संग्राम की सूचना ही इस तरह की गई है कि इसमें बहने चाहे तो पुरुषों से अधिक भाग ले सकती है।"[10] कस्तूरबा गाँधी, अरुणा आसफली, सुचेता

---

[9] औरत एक दृष्टिकोण- अमृता प्रीतम, पृ.120

[10] दूसरे सत्याग्रह के आंदोलन के दौरान- गाँधीजी

कृपलानी आदि औरतें राजनीतिक आंदोलन से जूडी रही थी। सरोजिनी देवी नायडू, राजकुमारी अमृत कौर, सुचेता कुपलानी आदि ने संविधान निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान किया था। स्वतंत्रता के बाद नारी मुक्ति को लेकर कई आन्दोलन हुए जिसके फलस्वरूप दहेज प्रतिबन्ध कानून, घरेलू हिंसा प्रतिबन्ध कानून जैसे अनेकानेक कानूनों तथा नियमों का निर्माण हुआ। आज़ादी के बाद भारतीय नारी अपनी पूरी शक्ति के साथ आगे बढ रही है। "नारी मुक्ति आंदोलन ने भारतीय नारी को जागृत करने में बहुत बडी भूमिका निभाई है। आज वह पुरुष की दासी नहीं रह गई, आज की नारी की अपनी अलग पहचान है उसका अपना एक अलग व्यक्तित्व है। आज उसने अपने पॉव पर खडा होना सीख लिया है।"[11] इस प्रकार भारतीय नारी मुक्ति आंदोलन नारियों की स्थिति में सुधार लाने में एक हद तक सक्षम हुआ है। स्त्री विमर्श का पहला कदम स्त्री मुक्ति आंदोलन में मिल सकता है।

नारी के अस्तित्व के संबंध में कहें तो, अनादिकाल से नारी सामाजिक अन्याय, अत्याचार शोषण का शिकार बनी रही है। पुरुष-प्रधान समाज व्यवस्था में उसका अस्तित्व तथा स्वत्व का ह्रास ही दृष्टिगोचर है। पुरुष की अवधारणा जहाँ केन्द्रीय और सकारात्मक होती है वहीं स्त्रीत्व की मूल अवधारणा ही नकारात्मक है। पुरुष सत्तात्मक समाज में सारी मर्यादायें तथा संस्कार रूपी बंधने पुरुष मूल्यों और मार्दादाओं से संचालित एवं निर्देशित होता है। पुरुष समाज के साथ अपने विभिन्न संबंधों की जकड के बावजूद अपने स्वत्व की तलाश के लिए स्वतंत्र हो सकता है जबकि स्त्री को सतत् विस्मृत रहकर माँ, बहन, भाभी पत्नी, पुत्री के रूप में ही मर जाना होता है। स्त्रीत्व का विशेष प्रयोग से उसे दबाकर स्त्री बनायी जाती है और

---

[11] दीप्ति नवल - धर्मयुग, नारी अंक, 5 मार्च-1955, पृ.14

जीवन पर्यंत सामाजिक संबंधों तथा संस्कारों में उसकी परिभाषायें तय करती है। स्त्री के विकास में संस्कृति की प्रतिगामी भूमिका का तसलीमानसरीन भी रेखांकित करती है- "आगे बढने की योग्यता होते हुए भी संस्कारों की रस्सी उसे पीछे खींचती है।"[12] संस्कारों के बंधन में फँसकार नारी अपने अस्तित्व खो बैठती है। नारी का स्वत्व पुरुष की अनुगमिनी बनने में रहा। समाज की आधी शक्ति सामाजिक, धार्मिक संस्कारों, रीति रिवाज़ों तथा संस्कारों के नाम पर लक्ष्मण रेखा के भीतर जकड दी गयी। मनुस्मृति में यों कहा है- "वैवाहिकों विद्याः स्त्रीणां संस्कारों वैदिक स्मृतः पति सेवा गुरौ बसो गृहोर्थाf न परिक्रिया।"[13] परिणामतः हज़ारों वर्षों तक समूचा स्त्री-समाज शिक्षा व ज्ञान के प्रकाश से वंचित रहा। अशिक्षा तथा आर्थिक परावलंबन इन दो कारणों ने मिलकर स्त्री को दासत्व की स्थिति में पहूँचा दिया तथा पुरुष वर्चस्ववादी समाज ने उसके भरण-पोषण के नाम पर मालिक और देवत्व का दर्जा प्राप्त कर दिया। भारतीय समाज की रूपरेखा न केवल पुरुष प्रधान रही बल्कि वहाँ स्त्री को मानवीय मानुषी समझने से ही इनकार कर दिया गया। मृणाल पांडे का कहना है कि-"लगभग सभी धार्मिक और दार्शनिक दायरों में स्त्रीत्व का पुरुष के संदर्भों में एक अपूर्ण और जीवन के रूप में ही देखा गया है। वरना यह न माना जाता कि मात्र स्त्री होकर जन्म लेना, यही सामाजिक अर्थ में (सार्थकता में) स्त्री होने के लिए पर्याप्त नहीं और स्त्री के लिए स्त्रीत्व (यानी खास तरह से उठने, बैढने, बोलने, चलने) की विशिष्ट तालीम भी लेते चलना ज़रूरी न कहा जाता है।"[14] यह

---

[12] औरत के हक में - तसलीमा नसरीन, पृ.23

[13] मनुस्मृति, पृ.1:4

[14] स्त्री देश की राजनीति से देह की राजनीति तक- मृणाल पांडे, पृ.5

तो सर्वविदित है कि भारतीय संविधान के अनुसार महिलाओं के मूल अधिकारों में समानता का अधिकार जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में है। पर व्यवहार में उसे कार्यान्वयन करने के लिए स्त्रीयों को एक लंबे संघर्ष से गुजरना पडा। औद्योगीकरण और आधुनिकीकरण की ओर बढते भारत में सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिदृश्य भी तेजी से बदला फिर भी नारी की सामाजिक, राजनीतिक तथा आर्थिक स्थिति में कोई विशेष व वास्तविक बदलाव नहीं आया है और न ही उसकी समस्यायें और संकट भी कम हुए। बल्कि वास्तविकता यह है कि स्त्रियों की समस्यायें पहले से अधिक जटिल और गंभीर रूप में सामने आयी है। जैसे सुमन कृष्णकांत के अनुसार-"महिलाओं को जिन्होंने अपने परिवार तथा समाज के लिए वस्तुतः स्वयं को मिटा दिया, योजनाबद्ध विकास के पाँच दशकों के बाद भी उन्हें सामाजिक व्यवस्था में यथोचित स्थान नहीं मिला है।"[15] जीवन के हर क्षेत्र में महिलाओं की सशक्त उपस्थिति, स्त्री शक्ति के विकास तथा सामाजिक व राष्ट्रीय विकास में उनके महत्वपूर्ण योगदान को देखकर तो 'यत्र नार्येस्तु पूज्यन्तें, रमन्ते तत्र देवताः' की उक्ति चारितार्थ होनी चाहिए थी, लेकिन हुआ उसके ठीक विपरीत। आशा के विपरीत नारी शोषण व अत्याचार में वृद्धि होती गयी। शिक्षा के बाजजूद भी नारी दमित रह जाती रही। दहेज प्रथा, लिंग भेद, भ्रूणहत्या, यौनशोषण आदि कूरीतियों नारी स्वतंत्रता के लिए चुनौती रही गयी। जीवन के विविध क्षेत्रों में अपनी सशक्त उपस्थिति दर्ज कराती स्त्रियों की स्वाधीनता की भावना को स्वच्छंदता का पर्याय मानकर उसे भोग्य समझा जाने लगा। पारिवारिक जिम्मेदारियों के निर्वाह, में उसे पुरुष का अपेक्षित सहयोग नहीं मिला।

---

[15] इक्कीसवीं सदी की ओर - सुमन कृष्णकांत, पृ.136

डॉ. रोहिणी अग्रवाल का कहना है कि-"नारी पुत्री है भगिनी है पत्नी है बस है नहीं तो नारी।"[16] जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अपने बहु आयामी व्यक्तित्व तथा बहुमुखी प्रतिभा को सिद्ध करने के बावजूद हमेशा की तरह आज भी स्त्री शोषित व उत्पीडित है, दोयम दर्जे का जीवन जीने के लिए अभिशप्त है।

ऐसे एक अवसर पर स्त्री-विमर्श की प्रधानता उभरती है। नारी मुक्ति की दर्द भरी कहानी को सृजनात्मक परिवेश में उभरने में साहित्य सदा अग्रणी है। नारी मुक्ति के इर्द-गिर्द घूमता साहित्य पुरुष तथा स्त्री दोनों से संपन्न रहा है। लेकिन यह कटु सच्चाई है कि नारी व्यथा को सही अर्थों में नारी ही समझ सकती है। यहाँ उभरती है स्त्री लेखन की प्रधानता। नारी द्वारा ही नारी व्यथा का ठीक अभिव्यक्ति होती है क्योंकि उस व्यथा का वह खुद अनुभवी है -"आज स्त्रियाँ साहित्य के हर क्षेत्र में सक्षम रूप से हस्तक्षेप कर रही है। वे अपने भोगे हुए सच को ही नहीं, जिसे वे अधिक विश्वसनीयता से अभिव्यक्त करती है, बल्कि दूसरे विषयों पर भी उसे विश्वसनीयता से लिखती है।"[17] इसका मतलब यह नहीं कि पुरुष लेखकों द्वारा नारी पीडा को व्यक्त नहीं किया जा सकता। फिर भी महिला लेखिकाओं का स्त्री संबंधी दृष्टिकोण, वर्ण्य विषय और उसका पैनापन ज्यादा प्रामाणिक है। इस पर डॉ. विनय

---

[16] हिन्दी उपन्यास में कामकाजी महिला - डॉ. रोहिणी अग्रवाल, पृ.19

[17] स्त्री विमर्श कलम और कूदाल के बहाने- डॉ. रमणिका गुप्ता, पृ.9

का कहना है कि- "कहना न होगा कि आज महिला लेखन सामान्य और असामान्य स्थितियों में स्त्री की संघर्षशीलता और सामाजिक न्याय पाने की भावना तथा अपने अस्तित्व को एक इकाई का रूप देने की इच्छा से प्रेरित है। समकालीन जीवन के परिदृश्य में भयानक विसंगतियों के बीच लेखन के स्तर पर महिला रचनाकार इस बात का स्पष्ट प्रमाण दे रही है कि राजनैतिक बदलाव के साथ सांस्कृतिक और सामाजिक स्तर पर परिवर्तन बहुत आवश्यक है।"[18] अतः नारी जीवन की व्यथा-कथा की रचनात्मक धरातल पर प्रस्तुति ही स्त्री-विमर्श का मुख्य उद्देश्य है, जो आधुनिक युग की माँग है।

4.2 कुसुम कुमार और नादिरा ज़हीर बब्बर के नाटकों में चित्रित नारी समस्याएँ

स्त्री-विमर्श के परिप्रेक्ष्य में अनेक महिला-लेखिकाओं ने अपना योगदान दिया है। ऐसी लेखिकाओं में कुसुम कुमार और नादिरा ज़हीर बब्बर का अपना विशिष्ट स्थान है। दोनों ने पीडित एवं प्रताडित स्त्रीयों के व्यथा एवं पीडा के साथ स्वतंत्रता के लिए छटपटाती स्त्रियों के संघर्ष को भी प्रस्तुत किया है। इनके नाटकों में 'स्त्री-विमर्श' सशक्त तेवर को लेकर उपस्थित है। वास्तव में आधुनिक बुद्धिवादी नारी, इज्जतहीन सामाजिक वातावरण में अपने अस्तित्व को ढूँढ रही है। परिवेश के कट्ठर नियमों में जकडकर वह स्वतंत्रता से सांस नहीं ले सकती है। ऐसी नारियों के संत्रास भरी अवस्था का स्पष्ट बयान है इनके नाटक। उन्होंने नारी की दमन-गाथा के साथ-साथ इस दमन-चक्र के खिलाफ आवाज़ उठाती स्त्रीयों का अत्यंत बारीकी के

[18] आधुनिक कथा साहित्य में नारी स्वरूप और प्रतिभा - डॉ. विनय, पृ.48

साथ चित्रण किया है। इनके नाटकों की स्त्रीयाँ शिक्षित और आर्थिक स्वाअलंबी होकर भी पुरुष की संस्कार जन्य कुंठाओं का शिकार होती है। इनके नाटकों में रोज़ के जीवन की छोटी-छोटी घटनाओं को केन्द्र में रखकर नारी के समग्र जीवन संघर्ष को चित्रित किया गया है। नारी मनोविज्ञान, सामाजिक विसंगतियों का बोध और उनसे उभरने की बेचैनी उनके नाटकों की पहचान है।

4.2.1 समाज में नारी का अस्तित्व

वैज्ञानिक उन्नति और शिक्षा में आयी क्रांती ने नारी को अपनी परिस्थितियों से प्रतिशोध तथा अपनी अहमियत को बरकरार रखने की प्रेरणा तो ज़रूर दिया है। फिर भी परंपरागत रूढियाँ और बंधन उसे ऐसे जकडी हुई है कि नारी की सामाजिक स्थिति में कोई बदलाव नहीं आया है। नारी की ऐसी अवस्था के लिए खुद परिवार और समाज जिम्मेदार है। शिवप्रसाद सिंह की राय में- "विवाह के समय कन्या को यह शिक्षित करके भेजा जाता है कि ससुराल में डोली से प्रवेश करने के पश्चात कन्या अर्थी पर ही ससुराल से बाहर निकलती है।"[19] यही तो समाज में नारी की स्थिति है। आज उच्चशिक्षित होकर भी पुरुष या समाज के विकृत धुंधली मनोदशा नारी के विकास में बाधा डालते है। कुसुम कुमार के 'सुनो शेफाली' में शेफाली के आत्मसम्मान को चोट पहुँचानेवालें कार्य ही समाज से और खुद परिवार से उसे मिलता है। सत्यमेव दीक्षित और बकूल के अलावा खुद माँ ही उसे शादी की प्रेरणा देती है। जैसे वह शेफाली से कहती है-

---

[19] आधुनिक हिन्दी परिवेश - शिवप्रसाद सिंह, पृ.36

"तेरे पाव पडती हुँ, लडकी तेरे पाँव पडते हुँ कुछ खुद पर तरस खा... कुछ हम पर रहम कर...कुछ भगवान से डर....

मैं कुछ नही चाहती...सिर्फ तेरी शादी हो जाए उससे।"[20]

यहाँ शेफाली की जागरूक मानसिकता के विरुद्ध होनेवाली बातें उसके आत्मसम्मान को घाव करती है। अपनी माँ तक उसे समझ नहीं पाती। ऐसे अवसर पर शेफाली अपने अस्तित्व खो बैठती है। जया परांजपे के अनुसार-"शेफाली की व्यथा नारी विषयक पारंपरिक मान्यताओं पर प्रश्नचिह्न बनकर उभारती है।"[21]

'संस्कार को नमस्कार' में नारी निकेतन को अपने स्वार्थ लाभ के लिए उपयोग करनेवाला संस्कार चंद, समूचे नारियों के आत्मसम्मान पर पानी फेरता है। संस्कार चंद नारी केन्द्र की औरतों की शक्ल पर ज्यादा ध्यान देता है- "इन भवानियों से कहो अपनी शक्लें तो ठीक रखा करें। केन्द्र का दारोमदार इनपर है- माना, पर सूरतों पर चार बजाये रखने का मतलब? मुझे तो यहाँ की ज्यादातर महिलायें भिखारिनी जैसी लगती है।"[22] नारी केन्द्र की सारी महिलायें अपनी इज्जत खो बैठती है। और पतित जीवन जीने को बाध्य हो जाती है।

'जी जैसी आपकी मर्जी' नाटक में दीपा, वर्षा, सुल्ताना और बबली टंडन, चारों अपनी पारिवारिक सामाजिक परंपराओं में पिसकर अपने आत्मसम्मान खो

---

[20] सुनो शेफाली - कुसुम कुमार, पृ.37

[21] हिन्दी नाट्यविमर्श- जया परांजपे, पृ.62

[22] संस्कार को नमस्कार- कुसुम कुमार, पृ.21

देती है। पढी लिखी होकर भी बबली सामाजिक रूढियों में कैद रह जाती है। नाटक में बबली टंडन का प्रश्न है-

> "एक छत और दो वक्त की रोटी देना कोई चांद तारा तोड़ लाना तो नही है जिसके लिए हम अपना सब कुछ गॅवा देते है क्यों...क्यों.?"[23]

नारी अपने परिवार से ही हरी हुई है फिर समाज उसे आश्रय कैसे देगा? बबली टंडन की दुरवस्था पारिवारिक दखियानूसी मूल्यों की उग्रता तथा पुरुष की कुचली हुई नीति के कारण ही है। नाटक में सुल्ताना, दीपा और वर्षा सामाजिक परिस्थितियों के अनुकूल अपने को बदलने को बाध्य होती है। वर्षा पोटे-

> "जैसे ही मैं सातवीं और आठवीं क्लास में आयी तो भी तो life ही बदल गयी अब स्कर्ट नही पहनना, पंजाबी ड्रस पहनना। हुँ SSS लडकियाँ ...ऐसे नहीं बैठती, वैसे नहीं बैठती, लडकियाँ ज़ोर से नहीं हँसती, लडकों को साथ खेलना बंद।"[24]

इस प्रकार नारी अपने परिवेश में कैद होकर अत्याचारों को झेलती है जो उनका दायित्व माना जाता है। ऐसी अवस्थाओं में परिवार और कायदे-कानून नारियों को आजीवन जकडते है। ऐसी जकडी हुई अवस्था में नारी में अपना आत्मासम्मान नष्ट हो पाती है। अतः स्त्री को अपने परिवार में, समाज में अपना कोई अस्तित्व नहीं दिखाई देता है।

---

[23] जी जैसी आपकी मर्जी- नादिरा ज़हीर बब्बर, पृ.40, 41

[24] जी जैसी आपकी मर्जी -नादिरा ज़हीर बब्बर, पृ.19

4.2.2 समाजोद्धार की आड में नारी शोषण

समाजोद्धार अपने लक्ष्य तक सही रास्ते में जब पहुँचते है तब, वह पवित्र माना जाता है। लेकिन ऐसे पवित्र कार्यों की आड में जब शेषण का काम चलता है तब वह लज्जा की बात रह जाती है। समाजोद्धार के लिए जो बाध्य है उसी के द्वारा ही शोषण होता रहता है। रक्षक ही शिक्षक रह जाने वाली ऐसी अवस्था में नारी की सुरक्षा का कोई गेरेंडी नहीं है। नारी के लिए रक्षा का उपाय कहीं न रह जाता है। 'संस्कार को नमस्कार' में नायक संस्कार चंद एक समाज सेवक है साथ ही अपने दमित कामवासनाओं का निरीह लडकियों पर थोपनेवाला एक कपट भी है। उनके ज़रिए नारी निकेतन का संचालन अपने स्वार्थ इच्छा के उद्देश्य से है। समाज की अनाथ निरीह और गरीब नारियों का उद्धार संस्कार चंदा के 'निरीक्षण' में नारी निकेतन में संपन्न है। यहाँ असल में उद्धार के बदले शोषण ही चलता है। नाटक में सूत्रधार का यह कथन बहुत मर्मस्पर्शी है-

> "अपने दर्शकों को आग्रह करना तो ज़रूरी न सूत्रधार। कहीं वे भूल से इस नाटक का संबंध उसे पापिन से जोड ले। संस्कृति भारतीय संस्कृति से...जानते तो तब क्या होगा? अर्थ का अनर्थ। ....दर्शकों को यह समस्या ज़रूरी कि हमारे नाटक का संबंध संस्कृति से नहीं, संस्कार से है? कन्या से नहीं उसके पति से है।"[25]

विश्व के श्रेष्ठ संस्कार, भारत संस्कार माना जाता है जहाँ समाजोद्धार के बदले समाज का पतन तेज़ी से होता है जिसके फलस्वरूप संस्कार का स्तर गिर जाता है।

---

[25] संस्कार को नमस्कार- कुसुम कुमार, पृ.11

'सुनो शेफाली' में शेफाली एक शिक्षित और आत्मनिर्भर युवती होने के बावजूद भी उसपर, राजनीतिज्ञ सत्यमेव दीक्षित द्वारा शोषण की कोशिश होता है। अपने बेटे बकूल द्वारा उसकी शादी कराने के पीछे एक गूढ लक्ष्य निहित है। एक दलित युवति से बेटे का शादी कराकर अपने राजनैतिक भविष्य को उज्वल बनाना ही उनका लक्ष्य था। लेकिन शेफाली इस धोखे से परिचित होती है और ऐसे कुटिल परिश्रम से पीछे मुडती है। नारियों को केवल अपनी कार्यसिद्धी के लिए उपयोग करनेवाले राजनैतिकों की कपटताओं पर नाटक व्यंग्य करता है। अपनी उल्लू सीधा करने के लिए राजनायिक अपनी कुटिल नीतियों को उपयोगी बनाने की कोशिश करते है। ऐसी कोशिशों में नारियों का शोषण ही ज्यादा होता है। शेफाली की व्यंग्य भरी बाते सुनिये-

> "अछूतोद्धार की इस दिशा में सभी प्रयत्न असफल होते देखकर मैंने निराशा की स्थिति में पहले इस हरिजन लडकी के प्रेम किया, फिर शादी कर ली.....लीजिए भाइयों और बहनों अब तो आप ही देंगें ना अपना कीमती वोट। यही ना तुम्हारा सपना?"[26]

शेफाली द्वारा बकुल पर लगाया गया यह व्यंग्यबाण समूचे कपट समाज सेवियों पर चुभनेवाला है।

4.2.3 यौनशोषण

नारी समस्यायों में सबसे प्रमुख है यौन शोषण की समस्या। ऐसी एक समस्या की प्रासंगिकता ऐतिहासिक महत्व रखती है। क्योंकि दरबार में 'पांचाली वस्त्राक्षेप'

---

[26] संस्कार को नमस्कार- कुसुम कुमार, पृ.54

से शुरू होनेवाली एक महान परंपरा भारत संस्कृति की अपनी धरोहर है। इस परंपरा का पालन आज भी उसी तीव्रता या उससे बढकर हो रहा है। आश्चर्य की बात यह है कि समय का बदलाव हमारी सारी परिस्थितियों को बदला है लेकिन पुरुषों के ऐसे विकृत मनोभाव में कोई परिवर्तन अभी तक नहीं आया है। नारी को भोगविलास का साधन माननेवाला मर्द की यह कुटिल नीति आज बढती जाती रही है। 90 दिन की बच्ची को लेकर 90 उम्र की बूढी तक पुरुष वर्ग की निकृष्ट कामवासना का शिकार है। महिला आयोग की अध्यक्षा मोहिनी गिरी ने अपने आँकडे प्रस्तुत करते हुए लिखा है कि- "दिल्ली में 17 घंटे में एक स्त्री के साथ बलात्कार और हर 12 घंटे में एक स्त्री का यौनशोषण होता है।"[27] पुरुष वर्चस्व के बोलबाला जब तक समाज को ग्रसित है तब तक नारी शोषणों से मुक्ती नहीं। 'संस्कार को नमस्कार' नाटक यौनशोषण के विकृत रूप को हमारे सम्मुख उभारते है। प्रस्तुत नाटक का उद्देश्य ही यौन शोषण का पर्दाफाश है। नटी द्वारा नाटक की प्रमुख समस्या का यों उद्‌घाटन होता है-

"इस नाटक की मेन प्राब्लेम है-सैक्स एकस्लाइटेशन।"[28]

नारी केन्द्र में संस्कार चंद के आगमन का मुख्य उद्देश्य वहाँ की कुमारियों का यौनशोषण है। कुटिल कामवासना से मस्त संस्कारचंद लडकियों को मदिरा पिलाता है और यौन शोषण केलिए सज्जित करता है। उदाः-

---

[27] दैनिक हिन्दुस्तान, अखबार दिनांक, 15 मई 1995

[28] संस्कार को नमस्कार- कुसुम कुमार, पृ.13

"संस्कार कितनी अच्छी, कितनी पवित्र हो तुम शक्ति! टिटरान के कपडों में बहुत सुन्दर लगोगी तुम! बस करो अब-बहुत थक गई होगी तुम। लेट क्यों नहीं जाती यहाँ- लेट जाओ अब हम तुम्हारी टाँगे दबायेंगे- इतना घबरा क्यों गई हो?"[29]

ऐसे संस्कार चंद अपने पुरुषत्व का रूआब उनपर डालता भी है। प्रसिद्ध आलोचक नरनारायण राय की राय में- "अपनी पत्नी को माँ समझनेवाले संस्कार भाई अपने पौत्री के उम्रकी लडकी साथ दुर्व्यवहार करते है। ऐसे दोहरे व्यक्तित्व के धनी संस्कार भाई को लेखिका ने यथार्थ रूप में चित्रित किया है।"[30] मर्द अपनी कामेच्छा के आगे रिश्तों को तृण सम कुचलकर फेंक देता है। आश्रम की लडकियों के दादा का स्थान रख्नेवाला संस्कार चंद उनको अपनी यौनतृप्ती के शिकार बनाते है। उनके जैसे कपट समाज सेवी आज समाज में सर्वत्र व्याप्त है।

नादिरा ज़हीर बब्बर की 'सकुबाई' नाटक में सकु अपने मामा द्वारा बलात्कृत का शिकार होती है। जिन हाथों से उसका संरक्षण होना होता उन्हीं से उसका यौन शोषण सकु के लिए सघन प्रहार बन जाता है।

"सकु जैसे कोई कुचल दे रहा है....बलात्कार? या फिर छोटे मामा ने मुझे बेहोश कर दिया था।"[31]

---

[29] संस्कार को नमस्कार- कुसुम कुमार, पृ.45

[30] समकालीन हिन्दी नाटक टूटता संदर्भ- नर नारायण राय, पृ.154

[31] सकुबाई- नादिरा ज़हीर बब्बर, पृ.30

पुरुष की स्वामी भावना ही नारियों की ऐसी स्थिति के मूल में है। अपनी ऐसी हालात से बचने के लिए प्रतिशोध की रास्ता अपनाने के लिए नारी को तैयार होना चाहिए। आपका अलग नाटक 'जी जैसी आपकी मर्जी' में सुल्ताना की बेटी पर उसके दूसरे पति हकीम का बलात्कार वह बरदाश्त नहीं कर पाती। पति से बेटी का यौन शोषण सुलताना के दिल को कचोटती है। एक माँ की आँखों के सामने बेटी पर बलात्कार मानवता पर होने वाला सघन प्रहार है।

> सुल्ताना-"मेरे सर पर खून सवार था। मैं गुस्से से पागल हो रही थी, जहाँ वे हकीम साहब को चोट लगी थी उसी जख्म में मारती चली मारती चली गयी।"[32]

एक माँ की दर्दनाक नियति का इससे ज्यादा बयान नहीं चाहिए। जो सबीहा को अपनी बेटी की तरह मानना चाहिए था, उसी के द्वारा उसका यौन शोषण अत्यंत दर्दनाक तथा हमारे मन को निचोडने वाला था। क्या पुरुष अपनी चाह सभी पर उतरने के हकदार है? ऐसा एक प्रश्न बीते समय से आज भी हमारे सम्मुख है जिसका उत्तर न मिल पाया है। शादी शुदा औरतों पर होनेवाला यौनशोषण भी सबसे प्रमुख समस्या है। वे अपने अस्तित्व पर प्रश्नचिह्न लिये जीने लगती है। नादिरा जी के 'जी जैसी आपकी मर्जी' में सुल्ताना और बबली टंडन अपने-अपने पति द्वारा यौन शोषण के शिकार रही है। पति की कामलिप्सा के शिकार होकर

---

[32] जी जैसी आपकी मर्जी- नादिरा ज़हीर बब्बर, पृ.33

ये दोनों अपनी नियति पर रो बैठती है। "नाटक सवाल उठाता है कि ज़िन्दा भर रहने के लिए औरत को अन्धा, बहरा और गुँगा बन जाना ज़रूरी है?"[33] समाज ने नारी के अपनी नियति से परिस्थितियों से जूझकर तडपने लायक बनोदिया है।

4.2.4 नारी भोग विलास का साधन

व्यावसायीकरण के इस युग में नारी एक भोगविलास का साधन बन गयी है। समाज स्त्री को ऐसी एक मानसिकता से देखता है कि जिनका फल नारी को भोगविलास की वस्तु मानना ही रह गया है। 'दयाशंकर की डायरी' में मुंबई जैसी महानगरीय सभ्यता में नारी को प्राप्त मान्यता स्पष्ट दिखाई देता है। दया शंकर की बाते इसका प्रकट उदाहरण है-

> "दयाशंकर- खास तौर पर बूडढे जैसे ही कोई खूबसूरत लडकी ट्रेन में चढ़ेगी ये अपनी सीट छोडकर उसे बिठा देती है और कहते 'आजा बेटी यहाँ बैठ जा' फिर बगल में खडे होकर उसके ब्लाउस में झांकते है।"[34]

नारी के शरीर की पवित्रता आज कुटिल दृष्टियों से दूषित हो रही है। विज्ञापन और फिल्मों द्वारा नारी के नंगे शरीर का प्रदर्शन होता रहता है, जिसने उसे एक बिकाऊ माल बना दिया है। विशेषतः अमीरो के लिए नारी एक मूल्यहीन सौदा है जिसका जब चाहे इस्तेमाल कर सकते। उनकी निगाह में नारी 'यूस एंड थ्रों' की चीज़ है। 'जी जैसी आपकी मर्जी' में वर्षा ऐसे परंपरागत शोषण का शिकार होने से बचने की कोशिश करती है। नाटक में जिग्नेश नामक खानदानी लडका वर्षा को फसाने के

---

[33] आधुनिक भारतीय नाट्यविमर्श- जयदेव तनेजा, पृ.291

[34] दयाशंकर की डायरी- नादिरा ज़हीर बब्बर, पृ.22

लिए जाल बिछाता है लेकिन दीपा अपने साहस और अक्ल से उस कुटिल नीति से बचती है। दीपा का सवाल बडा मर्मस्पर्शी रह जाती है-

"Bullshit Community के बाहर की लडकियों को घुमाना चाहते हो, उनके साथ सोना चाहते हो तब मम्मी, पापा से पूछा था?"[35]

'आपरेशन क्लाउडबर्स्ट' में हवलदार राठी मोरोमी की ओर वासनायुक्त व्यवहार करता है। लेकिन मोरोमी प्रतिशोध करती है और उस पर टूट पडती भी है।

"मोरोमी : ए क्या। तेरे दिल में, तेरे सीने में कोई सच्चाई है?...अभी जब में बेहोश हो गई थी तब तू किस तरह से मेरे बदन को टटोल रहा था।"[36]

नारी के प्रति सामाजिक मानसिकता में जब तक बदलाव न आयेगा तब तक वह ऐसी अवस्था से छुटकारा नहीं पा सकेगी।

4.2.5 नारी : आतंकवाद और सांप्रदायिक दंगे का शिकार

वर्तमान समाज में नारी केन्द्रीय भूमिका निभा रही है, जिसका फल यह है कि समाज की सारी गतिविधियों का असर उस पर पडता ही है। आतंकवाद हो, सैनिक कार्यवाही हो या सांप्रदायिक दंगे नारी पर ही सबका बुरा प्रभाव पडता है। औरत जात हो तो सब सहने के लिए बाध्य दिखायी पडती है। लश्कर चौक नाटक में इस समस्या को प्रमुख स्थान दिया गया है। प्रस्तुत नाटक में धार्मिक मतभेद जब दंगे में परिणत होते है तो औरतें ही उसमें ज्यादा तकलीफ झेलती है। धार्मिक नेताओं की

---

[35] जी जैसी आपकी मर्जी- नादिरा ज़हीर बब्बर, पृ.24

[36] आपरेशन क्लाउडबर्स्ट- नादिरा ज़हीर बब्बर, पृ.49

स्वार्थता के कारण जो लडाई होती है उसे रोकने के लिए औरतें ही आगे आती है। नाटक में पारा बेगम का सवाल अधिक प्रासंगिक लगता है-

> "मैं पारा बेगम, घर की लाज शरम! क्या आप में से कोई बताएगा, मुझे कहाँ जाना होगा?"[37]

मशहूर समाज सेविका उर्वशी बूटालिया का कहना है कि कभी-कभी स्त्रियाँ भी सांप्रदायवाद के थोख्रे में आकर उसके प्रेरक तत्व के रूप में काम करती है। 'सुमन और सना' 2002 को गुजरात में हुए सांप्रदायिक दंगे के शिकारों पर लिख्रा गया नाटक है। इस नाटक में कितनी औरतें बेवा हो गयी, कितने पुरुषों की कुटिल मानसिकता के शिकार हुई, सब का ठीक बयान न मिल पाता। नारियों के दिलों को ही सारे हत्याकांड प्रभावित करती है। जैसे-

> "अमीन है- तब से आठ साल हो गये। उसकी ख्रबर नहीं, पता नहीं मेरा बेटा कहाँ होगा, किस हाल में होगा? तुम्हें तो इस बात की तसल्ली होगी कि तुम्हारा बेटा अब ईश्वर की पनाह में है। मुझे तो वो भी नहीं... मैं रोज उसके आने का इंतजार करती हुँ और उसके मरने का मातम भी।"[38]

यहाँ तो स्त्री की शरणार्थी मानसिकता ही मुख्ररित है। वह समाज में एक दूसरे के बिना, चाहे पति हो, बेटे हो नहीं जी सकती है। प्रसिद्ध मनोशास्त्री सुधीर कक्कड इस प्रकार कहते है-

---

[37] लश्कर चौक- कुसुम कुमार, पृ.82

[38] सुमन और सना - नादिरा ज़हीर बब्बर, पृ.23

"For although in most societies an Indian woman does not stand alone her identity is wholly defined by the relationship to others."[39]

असल में यह एक भावुक औरत की नियति है कि वह अपना जीवन परिस्थितियों पर आश्रित रहकर ही जीती है। युग-युगों से वह त्याग का अवतार बनकर अपने परिवेश में हो रहे सारे अतिक्रमों से पीडित और प्रताडित है। 'आपरेशन क्लाउडबर्स्ट' में मोरोमी ऐसे कटु अनुभवों की भोक्ता है। मोरोमी की राय में वह खुद ही नही सारी पूर्वोत्तर राज्यों की महिलाएँ त्रासद ज़िन्दगी जी रही है। आतंकवाद और उसके परिणामस्वरूप मोरोमी अपने पति और बेटे को खोती है।

"कैं कंगः और तुम्हारे पति...?

मोरोमी : सुनन चाहते हो....सुन सकोगे? तुम्हारे आर्मी के जवान एक बार उसे शक की बुनियाद पर North Lakimpur उठाकर ले गये..कहते उसको वहाँ रखा। मैं हर हफ्ते मिलने जाती मगर वे कहते कि पूछताछ चल रही है। उसे इतना मारा पीटा कि उसका शरीर बेकार हो गया था। एक तरह से अपाहिज हो गया था। दर्द से बचने के लिए उसने नशीली दवाइयाँ लेनी शुरू कर दी... वो नशीली दवाइयों के बिना एक पल भी नहीं रह पाता था। और एक दिन वो दवायें खाकर ऐसा सोया कि फिर कभी नहीं उठा..."[40]

अपनी हैसियत की अथाह चाह रखनेवाली के सामने नियती एक दोधारी तलवार बनकर रह जाती है। अतः हम देख सकते है कि आतंकवाद, साम्प्रदायिक दंगे जैसे अत्याचार होने पर समाज में नारी की स्थिति है अत्यन्त दयनीय बन जाती है।

---

[39] विमेन इन इंडियन सोसाइटी- सुधीर कक्कड, पृ.44, 45

[40] आपरेशन क्लाउडबर्स्ट- नादिरा ज़हीर बब्बर, पृ. 49

4.2.6 लिंगभेद की समस्या

हमारे भौतिक वातावरण चाहे जितना भी बदले पुरुष का प्रभुत्व, सामाजिक मनोदशा में रूढ़मूल हुआ एक अजीब चीज़ है। इसका उत्तम उदाहरण है समाज में जड पकडा लिंगभेद। स्वतंत्रता प्राप्ति के वक्त सरकार द्वारा, स्वतंत्र भारत में लिंग के आधार पर भेदभाव न होने का निर्णय था। भारतीय संविधान से भी यह स्पष्ट किया है कि लिंग और जाति के आधार पर समाज में भेदभाव न हो जाये। लेकिन इन सबका तो लागू करना और एक बात है। वेल्ड इकणोमिक फारम के अनुसार भारत में स्त्री-पुरुष असमता ज्यादा स्थित है। पुरानी मान्यतायें स्त्री को सर्वंसहः का पद देकर सब कुछ भोगने के लायक बनी रखी है। "जीवन के कठोर संघर्ष में जो पुरुष विजयी प्रामाणित हुआ उसे न केवल कोमल हाथों से जपमाला देकर स्निग्ध चितवन से अभिनंदित करके और आत्मनिवेदन से अपने निकट पराजित बना डाला।"[41] भारत के कई परिवारों में कन्या का जन्म लेना अच्छा नहीं माना जाता। पुरुष और स्त्री का जन्म जिस कोख से होता है, उसकी हैसियत क्या पुरुष वादा कर सकता है? 'जी जसी आपकी मर्जी' में वर्षा पोटे को गर्भस्थ दशा में ही ख़त्म करने का पापा और दादी की कोशिश, लिंग भेद का उत्तम दृष्टांत है। लेकिन एक कर्तव्य निष्ठ डाक्टर की उचित हस्तक्षेप से वह बच जाती है। ऐसे डाक्टरों की अहमियत आज ख़तरे पर है क्योंकि, समाज के नियमों के अनुकूल अपने प्रोफेशनल एतिक्स को हवा में उडा देने वाले डाक्टरों की संख्या आज बढ रही है। वर्षा डाक्टर की कृपा से जन्म लेती है। लेकिन घर में दादी पापा की अतृप्ति का शिकार बनती रही। दादी माँ-

---

[41] साठोत्तरी हिन्दी नाटक- सविता चोधरी, पृ.53

"उसके जन्म पर मिठाई? मिठाई किस बात की? अरे तीसरी करमाजली पैदा हुई है। हमारी तो किस्मत ही फूट गयी।"[42]

नारी का जन्म से करमजली है, अनहोनी है, परिवार के दूसरों की सेवा के लिए बाध्य है। दीपा भाई के अधिकार भाव से ऊबकर उनके विरुद्ध अपना अस्तित्व को बरकरार रखने की कोशिश करते है। दीपा अच्छी तरह समझती है कि उसकी बहिन की मृत्यु घरवालों की लापरवाही से ही हुई है। नाटक में एक वक्त दीपा का यह प्रश्न हमारे मन में कील सा चुभता है-

"मैं हमेशा सोचती हुँ, ऐसा क्यों होता है? क्यों अम्मा को मार पडती है? क्यों हम बहिने हिन्दी मीडियम में? भैया को दो-दो ट्यूशन फिर भी घिस्तर-फिस्तर के पास होता है। हम बिना ट्यूशन स्कालरशिप लाते है। फिर भी क्यों नहीं प्यार करते हमें सब लोग? क्या बुराई है हम में, हमें भी तो प्यार चाहिए ना?"[43]

लडकी का जन्म जघन्य पाप समझने वाले इस वैज्ञानिक युग में ऐसे सवालों की प्रासंगिकता सोचने की बात ही है।

समाज में पुरुषों की अपेक्षा नारीवर्ग को ज्यादा कमज़ोर समझा जाता है। नारी को अबला ठहराने की कोशिश तो परंपरागत रूढ़ियों में है जो 'जी जैसी आपकी मर्जी' में नादिरा जी ने व्यक्त किया है। नाटक में वर्षा पोटे पिता की तबीयत की बुरी अवस्था में दूकान संभालती है और परिस्थितियों का अच्छे ढंग से

---

[42] जी जैसी आपकी मर्जी- नादिरा ज़हीर बब्बर, पृ.12

[43] जी जैसी आपकी मर्जी- नादिरा ज़हीर बब्बर, पृ.18, 19

सामना करती है। लेकिन बाकी लोगों की नज़र में वह लडकी है जो समाज में अबला है। सकुबाई में भी ऐसा एक संदर्भ है कि शहनाज़ अपने पति से बिछुडने के बाद भी दूकान संभालकर शान से जीने के काबिल रह जाती है। जैसे.....

> "इतनी अच्छी औरत...फिर आ गये उसके रिश्तेदार....दूकान हडपने...। दिन भर उसी का खाते थे और अब...। इतना सब होने के बावजूद उसने हिम्मत नही हारी। वहीं औरत शहनाज़ जिसका नाम। पर्दा उठाया और निकल पडी मर्दों की दुनिया में.....काफ्रेड मार्कट में मर्दों के बीच।"[44]

स्त्री-पुरुष भेदभाव एक परंपरागत दृष्टिकोण है जो औरतों को साहसिकता और आत्मनिर्भरता से दूर करता है।

लडकी होकर पैदा होने से भी बडा कसूर है लडकियों को जन्म देना। पुत्र और पुत्री दोनों ईश्वर के वरदान है। बेटा-बेटी, भाई-बहन, पती-पत्नी और बूढा-बूढी सब प्रकृति की स्वाभाविक अवस्थायें है जिन्हें कुटिल मानसिकता आत्मसात करने को हिचकती है। 'जी जैसी आपकी मर्जी' में सुल्ताना चार लडकियों को जन्म देने के कारण उसे पति से तलाक मिलता है। सांस इसी कारण से उसे दोषी ठहराकर गालियाँ देती थी कि वह घर में चिराग पैदा नहीं कर सकी। इसी नाटक में सुल्ताना की बेटी का कथन ऐसी संकुचित मनोदशा को दूर करने में काबिल है। जैसे सबीहा कहती है-

---

[44] सकुबाई- नादिरा ज़हीर बब्बर, पृ.50

"ससुराल वालों को और शौहर को शादी के पहले ही जाकर डॉक्टर से ये भी समझ लेना चाहिए कि औरत को लडका होगा कि लडकी ये मर्द की वजब से तय होता है कि ना औरत की वजह से।"[45]

बच्चा लडका हो या लडकी जिसका निर्णय पुरुष से तय होते है। लेकिन अधिकांश लोग इससे अनभिज्ञ है। और अगर ज्ञात है तो भी औरत पर आरोप लगाना ही सामाजिक कारोबार है। लिंगभेद से उत्पन्न विभिन्न समस्यायें औरतों के जीवन को संघर्षशील बनाने में सबसे आगे है।

4.2.7 भ्रूण हत्या

गर्भच्छेद ऐसी एक कटु समस्या है जो आज के इस शिक्षित युग में भी उसकी जडें मज़बूत दीख पडती है। माँ कहलाने से औरत वंचित होती, एक निष्ठूर और क्रूर नियति है। इसको एक गंभीर विषय के रूप में मानना ही चाहिए। गर्भच्छेद के कई कारण होने पर भी औरत इस क्रूरता का शिकार बन जाती है। कानून द्वारा इसका रोकधाम पूर्णतया असंभव है। 'पवन चतुर्वेदी की डायरी' में आर्थिक पराधीनता के कारण पवन सुषमा से दूसरे बच्चे को जन्म से पहले निकालने की माँग करता है। लेकिन सुषमा अपने मातृत्व पर खडे होने वाली ऐसी बाधाओं पर गरज पडती है। जैसे-

"नीच! कमीने! भेडिये! मुझसे बस यही रिश्ता है तुम्हारा? खून की एक बूँद तक नहीं मुझमें और मुझे ले चले हो उस कसाईखाने? मैं अच्छी तरह जानती हुँ, तुम मुझसे छुटकारा पाना चाहते हो.....।"[46]

---

[45] जी जैसी आपकी मर्जी- नादिरा ज़हीर बब्बर, पृ.34

आर्थिक अभाव, लडकी को जन्म देने की विमुख्रता आदि गर्भच्छेद के कारण है, लेकिन नारियों पर सबका प्रतिकूल असर पडता है। 'जी जैसी आपकी मर्जी' में छुटकी दीपा को गर्भस्थ अवस्था में ही मार डालने को दादी और पापा का निर्णय था। लेकिन डॉक्टर का उचित हस्तक्षेप उसे कोख्र से बाहर आने का भाग्य दिया।

> "दीपा : सुबह अम्मा बाबुजी के साथ डाक्टर के पास गई। पता नहीं वहाँ बात कैसे शुरू हुई, मगर डॉक्टर ने बाबुजी से कहा-
>
> "मैं आपकी रिपोर्ट पुलिस में कर सकती हुँ, आपकी हिम्मत भी कैसे हुई इस काम के लिए मेरे पास आने की।"[47]

प्रचलित बुरी सामाजिक रवैये के कारण ही गर्भच्छेद जैसे सामाजिक विपत्ती आज भी समाज में जड पकडी है।

4.2.8 शिक्षित नारी

शिक्षा के साथ-साथ नारी में नयी जागृति उत्पन्न हुई है। वह अपनी स्वतंत्रता पर कोई रोक नहीं चाहती। पुरुष के साथ ही या उसके कुछ आगे बढने में शिक्षा स्त्रियों को उपकारी रही। शिक्षा एक माध्यम है जिसके ज़रिए औरत अपने प्रतिकूल वातावरण को भी अनुकूल बनाती है। शिक्षा नारियों की बौद्धिकता को बदलती है जिसके कारण वह स्वाभिमानी, आत्मनिर्भर, तथा आत्मसम्मानित ठहर जाती है। यही कारण है कि 'सुनो शेफाली' की नायिका शेफाली अपनी प्रतिकूल परिस्थितियों पर एक हद तक जीत पाती है। राजनैतिक सत्यमेव दीक्षित तथा उनके बेटे बकूल के

---

[46] पवन चतुर्वेदी की डायरी- कुसुम कुमार, पृ.49

[47] जी जैसी आपकी मर्जी- नादिरा ज़हीर बब्बर, पृ.12

कमीने-सस्ता छल-कपट के आँगे शेफाली हार न मानती है। प्रतिशोध का रास्ता अपनाकर बाप-बेटे की कुटिल योजनाओं को वह हराती है-

> "शेफाली : बराबरी माँग कौन रहा है? बराबर तो मैं हुँ...उनकी दया का पात्र बनना होता तो मेरी शादी के ख़ील-बताशे तुम भी कब के बाँट चुकी होती... अम्मा, मैं कैसे ना यह सोचूँ कि हम उनकी दया के पात्र होने के अलावी भी कुछ है।''[48]

शिक्षित होने के कारण ही सरकार की कुटिल योजनाओं को भी वह बरदाश्त ना कर सकती है। दलितों के लेबल पर दी जानेवाली रियायतों को वह ढोंग मानती है। विनोद जैन की राय में- "शेफाली का विद्रोह वर्षों से मिलनेवाली रियायतों तथा आरक्षण नीति के विरुद्ध है।"[49] सकुबाई में सकु पढने की इच्छा तो करती थी लकिन अपनी बेटी साईली को पढाके वह अपनी शिक्षा कि चाह पूरा करती है-

> "सकुबाई- मेरी लडकी साइली, पढ़ाने में बहुत तेज़ है। बी.काम में फस्ट क्लास आई है। ...स्कालर मिलता है। ...बारहवीं में भी फर्स्ट क्लास था उसका...। (न्यूस पेपर दिख्राते हुए) ऐसा फोटो छापा था उसका।"[50]

समाज में नारी अपने पैरो पर खडे रहना चाहती है और उसी के लिए शिक्षा बहुत जरूरी है। आज वह हर क्षेत्र में कार्यरत है और प्रतिष्ठा भी प्राप्त कर रही है जिसका कारण शिक्षा ही है।

---

[48] सुनो शेफाली- कुसुम कुमार, पृ.38

[49] स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी महिला नाटककारों के नाटकों में सामाजिक चेतना- विनोद जैन, पृ.51

[50] सकुबाई- नादिरा ज़हीर बब्बर, पृ.61

4.2.9 सामाजिक रूढियों में फँसी हुई शिक्षित नारी

शिक्षित होकर भी परंपरा के द्वन्द्व में फँसनेवाली नारियाँ समाज में आज ज्यादा है। शिक्षित हो या अशिक्षित भारतीय नारी अपनी परंपराओं से संपृक्त रहना चाहती है। इस संबंध में नासिरा शर्मा लिखती है कि- "भारत वर्ष में जितनी बुद्धि जीवि महिलायें थीं या हैं उतनी संसार के किसी देश में नहीं, मगर यह सारी महिलायें पहले माँ, बहन, बेटी, पत्नी है और फिर इंजीनियर, डॉक्टर, लेखक, पायलट और मंत्री है। जिन औरतों का विवाहित जीवन सुखमय नहीं है समाज उन्हें आदर की दृष्टि से नहीं देखता, भले ही पद के कारण सम्मान करना मज़बूरी हो। यह अपने में एक गलत सोच है मगर हिन्दुस्तान के समाज का यथार्थ यही है।"[51]

घरवालों की पुरानी मान्यताओं और अपने नये दृष्टिकोणों के बीच फँसकर वह जीवन में द्वन्द का अनुभव करती है। 'जी जैसी आपकी मर्जी' में बबली टंडन शिक्षित होकर भी पुरानी रीति रिवाज़ों के अनुसार उसे अमनदीप जैसे धोखेबास से विवाह करना पडता है। अन्त में धोखा खाना पडता है। शिक्षित होकर भी पुरानी मान्यताओं मे फँसनेवाली औरतों की दयाहीन नियति वर्तमान समाज की एक महत्वपूर्ण समस्या है। प्रभा खेतान के अनुसार- "यह औरत की नियति है कि वह पुरुष की अधीनता में रहे। इस परिवर्तित नहीं किया जा सकता। उसको (स्त्री को) प्रभु से कोई सत्ता नहीं मिली।"[52] शिक्षितों की भी ऐसी पतित अवस्था समाज का अभिशाप है। 'जी जैसी आपकी मर्जी' में ही दीपा शिक्षित है। अच्छी तरह पढती

---

[51] औरत के लिए औरत- नासिरा शर्मा, पृ.151

[52] स्त्री उपेक्षिता द सेकेंड सेक्स का हिन्दी रूपांतरण-प्रभा खेतान, पृ.60

है और स्कालरशीप भी पाती है। लेकिन घरवालों की दख़ियानूसी विचारों में वह फंसकर अपने को तुच्छ माननी पडती है। घरवाले उसे आगे पढाना नहीं चाहते है।

4.2.10 अशिक्षित नारी की समस्या

शिक्षा के अभाव में नारी का जीवन बहुत तकलीफों से भरा है। शिक्षा न मिलने के कारण वह अपने परिवेश तथा कमज़ोरियों तथा ताकतों से अनभिज्ञ रह जाती है। 'जी जैसी आपकी मर्जी' में सुल्ताना की नियती यही है। अज्ञानता के कारण वह अपने ऊपर पडे अन्यायों का प्रतिशोध नहीं कर सकी। अपनी बेटी सबीहा से शादी की चर्चा करते वक्त, जो जवाब उसे मिला, वह सारी औरतों की आँखें खोलनेवाला है। सबीहा अपनी माँ से कहती है-

> "अम्मी तुम्हें तो तालीम की कद्र करनी चाहिए-अगर तुम पढी-लिखी होती तो क्यों ये दिन देखने पडते?...मैं किसी अनपढ से शादी नहीं करूँगी। मैं मार नहीं खाऊँगी, मेरे शौहर को मैं काम करने पर एतराज नहीं होना चाहिए।"[53]

यह एक सच्चाई है कि शिक्षा नारी के लिए एक शस्त्र जैसा है जिसके अभाव में वह अपने को कमज़ोर अनुभव करती है। अपने पर आनेवाले आक्रामक परिवेश से प्रतिशोध लेने के लिए शिक्षा उसका हत्यार बनेंगा।

4.2.11 नारी ही नारी का दुश्मन

बदलते मानवीय मूल्यों के साथ स्वार्थता और आपने लिए की भावना बढती जा रही है। ऐसी एक अवस्था में केवल अपनी बात पर व्यक्ति की चिंताएँ और क्रियायें सीमित होने लगी है। स्वार्थता के कारण मानव का मनोभाव इतना संकुचित

---

[53] जी जैसी आपकी मर्जी- नादिरा ज़हीर बब्बर, पृ.34

है कि बन गया सबसे आगे निकलने की इच्छा में अपने ही वर्ग को पीछा करने में वे हिचकता नहीं। 'संस्कार को नमस्कार' में कामोबेन नारी निकेतन की संचालिका है जो वहाँ के आलंबहीन औरतों के शोषण का मार्ग प्रशस्त करती है। निरीह औरतों की सहायता के आड में कामोबेन नारी शोषण के लिए संस्कार चंद को मदद करती है। संस्कार चंद द्वारा नारी निकेतन के औरतों के यौनशोषण की सहायिका है कामोबेन। वहाँ के निरीह औरतों के शोषण उसके लिए निसार बात है तथा उसी के द्वारा अपना स्वार्थ लक्ष्य की पूर्ती भी करती है। यौन शोषण जैसी भीषण समस्या में कामोबेन की भूमिका, नारी द्वारा नारी पर होनेवाला अन्याय का उत्तम उदाहरण है। इस प्रकार 'सुनो शेफाली' में शेफाली सत्यमेव दीक्षित और बकूल को शादी के मामले में परास्त तो करती है लेकिन बहन किरण से वह परास्त होती है।

> "बकुल और किरण शेफाली के सामने खडे है। किरन दुल्हन बनी बकुल का हाथ पकडे हुए है। बकुल शेफाली को देखकर निस्तेज चुपचाप खडा है। शेफाली की आँखें बंद। गले में कुछ फँसकर रह जाने की पीडा महसूस करती हुई वह खडी है।"[54]

अपनी बहन द्वारा शेफाली ज़िन्दगी में थकी हारी रह जाती है और ज़िन्दगी से उसे सदा के लिए हार माननी पडती है।

'जी जैसी आपकी मर्जी' में बबली टंडन के पति अमनदीप कोहली, अपने अफसर की पत्नी अनिता से नाजायज संबंध रखता है। माँ बनने की खुशी में झूमनेवाली बबली पति के इस रिश्ते से हार जाती है। जैसे वह स्वयं इस प्रकार

---

[54] सुनो शेफाली- कुसुम कुमार, पृ.56

कहती है- "वो अमन फोन पे...मुझे तो अपने कानों पर विश्वास नहीं हो रहा...पता है वो किसके साथ...वो उनके Boss की wife अनिता.. कितने प्यार से मिली थी मुझ से शादी में। मेरे तो जैसे पैरों तले ज़मीन ही निकल गई हो। ये सब क्यों...क्यों?"[55] यहाँ एक नारी से पराजित अन्य नारी की दुरवस्था सामने है। अनिता की स्वार्थेच्छा बबली की ज़िन्दगी को बरबाद करती है। अपनी लाभेच्छा के लिए अपनी ही वर्ग को सत्यानाश की ओर थकेलने वाली स्वार्थता युग की उपज ही है। 'पवन चतुर्वेदी की डायरी' में पवन-सुषमा दंपतियों के बीच इला आती है, एक विघातक तत्व के रूप में।

> "सुषमा - इला! इला!! इला !!! इला न हुई कोई देवी-भवानी हो गई, जो तुम्हें इस हदतक पागल बना दिया है उसने!"[56]

पवन इला के जाल में सुषमा को तिरोहित करने तक को तैयार हो जाता है। इस प्रकार नारी ही नारी का दुश्मन बन जाती है।

4.2.12 नारी आर्थिक विपन्नता का शिकार

मनुष्य के जीवन का नींव ही अर्थ पर स्थिति है। उसके रहन-सहन आर्थिक संपन्नता पर आश्रित है। स्त्री-स्वतंत्रता का सर्वाधिक महत्वपूर्ण आधार आर्थिक अधिकार है। अगर औरत ऐसी एक स्वतंत्रता को न छू पाती है तो उसकी ज़िन्दगी

---

[55] जी जैसी आपकी मर्जी- नादिरा ज़हीर बब्बर, पृ.40

[56] पवन चतुर्वेदी की डायरी- कुसुम कुमार, पृ.52

समस्याओं में उलझती है। मधुकिश्वर की राय में- "This lack of basic rights in both her natal and marital home contributed enormously of mating woman experience perpectual insecurity especially in those communities where a woman is kept from owning property in her own home."[57] 'संस्कार को नमस्कार' में नारी निकेतन में जो निरीह लडकियाँ है उनकी आर्थिक विवशता ही उन्हें ऐसे केन्द्रों की ओर थकेलती है। संस्कारचंद और कामोबेन अच्छी तरह जानते है कि इन लडकियों के लिए वकालत करने के लिए कोई न आयेगा। इसलिए ऐसी लडकियों का शोषण भी खूब होता है। 'सुनो शेफाली' में शेफाली दलित तथा गरीब है। इसलिए सत्यमेव अपना 'प्रभुत्व' दर्शाकर उसे अपना अधीन लाने की कोशिश करता है।

> "दीक्षित : तकलीफ की क्या बात है इसमें। जो लडकी मेरे घर की बहु बनने वाली है उसके लिए मैं चाहे जितनी तकलीफें उठा सकता हुँ। ..."[58]

वह सोचता है कि शेफाली जैसी गरीब लडकी उनकी आर्थिक स्थिति तथा समाज की मान्यता देखकर उसपर मुग्ध होकर अपनी इच्छानुसार कुछ करेंगे। 'पवन चतुर्वेदी की डायरी' में सुषमा भी आर्थिक विपन्नता से जूझती है जिसका दृष्टांत है पवन द्वारा उससे गर्भच्छेद करने का अनुरोध। पवन और सुषमा के जीवन की शिथिलता का एक कारण आर्थिक पराधीनता है। सुषमा अपने गरीब अवस्था में भी बच्चे को टालने केलिए तैयार नहीं होती है। ऐसी परिस्थितियों में विवश होकर जीना अपनी नियति मानती है। 'जी जैसी आपकी मर्जी' में सुल्ताना, बबली सब अपनी आर्थिक

---

[57] मधुकिश्वर, मानुषी पत्रिका, नं. 94, मई-जून 1996, पृ.7

[58] सुनो शेफाली- कुसुम कुमार, पृ.52

पराधीनता से जूझती है। इस विवशता के कारण ही वह अपनी परिस्थितियों में दबकर जीती है। बबली खुद पूछती है-

> "एक छत और दो वक्त की रोटी देना कोई चाँद तारे तोड लाना तो नहीं है जिसके लिए हम अपना सब कुछ गँवा देते है। सब कुछ खो देते है, सब कुछ देते है क्यों, क्यों...क्यों?"[59]

'सकुबाई' में सकुबाई अपनी आर्थिक स्वतंत्रता के लिए ही घर-घरों में काम करती है और अपने पैरों पर खडे होने में कामयाब होने की कोशिश करती है।

4.2.13 स्त्री-पुरुष समानता का प्रश्न

अर्द्धनारीश्वर की संकल्पना लेनेवाली भारतीय संस्कृति में नारी जीवन की सफलता पुरुष जीवन को धन्य बनाने में मानता है। नारी-पुरुष संबंध में समत्व की भावना केवल कागज़ों पर लिखने के लिए है। परंपरागत चिंताधाराओं के कुटिल आवेग में पुरुष को सदा समाज में ऊँचा स्थान प्राप्त है। स्त्री के लिए यह एक जिम्मेदारी है कि पुरुष को हर हाल में खुश रखना। 'जी जैसी आपकी मर्जी' में दीपा की दादी उनके भाई का खयाल रखने की ज़िम्मेदारी उन बहनों पर सौंपती है। एक बार दादी माँ को धिक्कारने से दीपा दंड भी पाती है। दीपा की कहना है-

> "मुझे भी गुस्सा आया, मैने कहा, 'भैया अपने आप पानी नहीं पी सकते?' ये सुनकर भैया ने मुझे ज़ोर से थप्पड मारा और कहा ढीठ हो गई है, ढीठ एक दिन उसके घुलाई कर दूँगा फिर दिमाग ठिकाने आ जायेगा।"[60]

---

[59] जी जैसी आपकी मर्जी- नादिरा ज़हीर बब्बर, पृ.41

[60] जी जैसी आपकी मर्जी- नादिरा ज़हीर बब्बर, पृ.15

इसी नाटक की बबली टंडन को पति घर में जाते समय माँ उपेदश देती है कि हर हाल से अपने पति को खुश रखना। बबली पूछती है कि हम स्त्रियों का खयाल कौन रखेगा?

> "मुझे बडा धक्का लगा, समझ में नहीं आ रहा था कि क्या करूँ। एक तरफ तो गुस्सा आ रहा था। दूसरी तरफ विदाई के टाइम पर मम्मी की दी हुई नसीहत, 'बेटी अपने हसबैंण्ड को हर हाल में खुश रखना।' "[61]

असल में नाटक द्वारा नादिरा जी पुरुष केन्द्रित समाज में नारियों के अस्तित्व पर प्रश्न लगाती है। अतः हम कह सकते है कि पुरुष वर्चस्व समाज की सारी विकृतियों का तिक्त फल नारी को ही भोगना पडता है।

4.2.14 वेश्यावृत्ति

वेश्यावृत्ति एक ओर से नारी शोषण ही है। कोई भी स्त्री जन्म से ही वेश्या बनना तय नहीं करती। परिस्थितियों के घेरे में आकार ही ऐसा होता है। एक और से नारी शोषण ही स्त्री को वेश्यावृत्ति की ओर ले जाती है, जिसका इतिहास मूकसाक्षी है। पुराणों में जो देवदासियाँ है उनका जीवन इस शोषण के कारण ही परिवर्तित हुए है और वे देवदासियों के पद पर अभिषिक्त हुई है। वेश्यावृत्ति, असल में नैतिकता का गिरावट है जो आज के इस युग में नारियों की अवस्था त्रासदी की

---

[61] जी जैसी आपकी मर्जी - नादिरा ज़हीर बब्बर, पृ.37

ओर ले जा रही है। "90 प्रतिशत वेश्याये अनपढ़ है, 60 प्रतिशत वेश्यायें हरिजन या निम्न वर्ग की है। 80 प्रतिशत स्त्रियाँ 12 से 20 वर्ष की उम्र के बीच इस पेशे में लाई गयी है, 75 प्रतिशत महिलायें उनके ही संबंधियों, रिश्तेदारों या जानकारों द्वारा बीची गयी 10 प्रतिशत महिलायें ग्रामीण क्षेत्रों से लाकर शहरी क्षेत्रों में वेश्यावृत्ति व्यवसाय में बसाई गयी है।"[62] 'सकुबाई' में वेश्यावृत्ति की समस्या वासंती के संदर्भ में मिलती है। नाटक में सकुबाई की बहन वासंती अपने इष्ट पुरुष के साथ गाँव से शहर की ओर भागती है। उनके साथ जीवन यापन के बाद और एक पुरुष के साथ फिर वह जीती है और अंत में मुंबई के कामाठीपुरा में वेश्यावृत्ति में आ पडती है।

> "पुलिस वाला- तेरी बहिन सोसाइड कर लिया है। आत्महत्या। उधर कामाटी पुरा में धन्धा करती थी।..."[63]

औरत वेश्या के रूप में अवरोधित होने के परिवेश प्रस्तुत नाटक में स्पष्ट दिखाया है। ऐसी एक अवस्था से ऊबकर वासंती अंत में आत्महत्या कर-लेती है।

4.2.15 पिता द्वारा बेटी का बलात्कार

परिवर्तनशील समाज में व्यक्ति अपने परिवर्तित नैतिक मूल्यों के बलबूते पर कुछ भी करने को उद्यत है। बलात्कार एक प्राचीन अस्तित्व रखने वाली समस्या है फिर भी संबंधों के नैतिक बोध पर हुआ ह्रास, उसको नया परिवेश देता है। "वैसे बलात्कार अपराध नहीं, बल्कि पुरुषों द्वारा, औरतों को इस खतरें का हौआ दिखाकर लगातार भयभीत रखना भर प्रतीत होता है।"[64] बलात्कार का रूप इतना धिनौना

---

[62] औरत होने की सज़ा, शोषण से दबी स्त्री देह- अरविन्द जैन, पृ.255

[63] सकुबाई- नादिरा ज़हीर बब्बर, पृ.42

[64] मैन विमैन एड रेप- अगस्त आवर विल, पृ.184

बना रखा है कि बाप-बेटी, भाई-बहन, मामा-भांजी आदि रिश्ते भी इस बलात्कार से मुक्त नहीं है। नादिरा जी के 'जी जैसी आपकी मर्जी' में सुल्ताना की बेटी सबीहा का बलात्कार हकीम द्वारा होता है। जिसे एक बाप के दायित्व से सबीहा को संभालने की जिम्मेदारी है, उसीद्वारा उसका बलात्कार बाप-बेटी जैसे पवित्र संबंधों पर प्रश्न चिह्न लगाता है। अपने पति की कुकृत्य सुल्ताना बरदाश्त नहीं कर सकती

> "मेरे सर पर खून सवार हो गया। मैने कोने में रखा हुआ कपडे धोने वाला धोका उठाया और अपनी पूरी ताकत के साथ उस हकीम के सर पर पीछे से दे मारा।"[65]

नाटक में पिता द्वारा बेटी का बलात्कार समूचे मानवीय संबंधों की शिथिलता की ओर इशारा है।

4.2.16 आत्मविश्वास नारी का शस्त्र

स्त्रीत्व की महिमा, मातृत्व की महिमा और सौन्दर्य की सरस अभिव्यक्ति ही स्त्री-चरित्र में ढालती थी। परंपरागत समाज में स्त्री का स्वाभिमानी व्यक्तित्व सहज स्वीकार्य नहीं था। लेकिन नारी जब अपने आत्मविश्वास में सुलगती है तो उसकी ज़िन्दगी और उसका दृष्टिकोण ज्यादा चमकने लगेगा। पुरुष का स्वाभिमान नारी के आत्मविश्वास के आगे पिछडा जाता है और नारी अपनी पिछडी परिस्थितियों को पीछा करके आगे बढती भी है। 'सकूबाई' में सकु अपनी ज़िन्दगी में कामयाब हो जाती है, जिसका एकमात्र कारण है उसका आत्मविश्वास। गाँव में घर की चहारदीवारी से मुंबई की ओर पलायन और अपनी आर्थिक स्वतंत्रता सकु की ज़िन्दगी के नियामक

---

[65] जी जैसी आपकी मर्जी - नादिरा ज़हीर बब्बर, पृ.33

तत्व रह जाती है। अशिक्षित सकु अपने शिक्षित होने की इच्छा से बेटी की पढ़ाई पूरा करती है। जीवन में उसने जो चाहा उसी को पाने में सक्षम भी निकला। उसकी बेटी साइली से लिखी गयी कविता उसके अदम्य आत्मविश्वास को दर्शाती है-

"यूं हताश न हो
तूने तो सारे जीवन संघर्ष किया
रानी लक्ष्मी बाई की तरह, तू भी तो एक योद्धा ही है
वो तो केवल एक लडाई लडी और मर्दानी कहलाई
पर तू तो सदियों से जीवन के संग्रम में जूझ रही।"[66]

सकु के लिए आत्मविश्वास एक ऐसा शास्त्र है जो परिस्थितियों के घेरे में जीतने को सहायक रहा। 'सुनो शेफाली' में शेफाली आत्मविश्वास भरी नारी है। दलित और शोषित ज़िन्दगी के संघर्षभरी अवस्थाओं में भी शेफाली सिर झुकाने को हिचकती है। सत्यमेव दीक्षित अपनी संपत्ती और राजनीतिक पद के गर्व से शेफाली को किराये में लेने की बात सोच रहा था लेकिन अपने स्वत्व का मोल चुकाने को वह किसी को हक नहीं देता है। मन्नन आचार्य और शेफाली के बीच की बातचीत में मन्नन शेफाली का कद्र करता है-

"मन्नन- भावुक आदमी ही ढोकर खाता है एक पल और दूसरे पल योद्धा बना खडा दिखाई देता है...इनसानियत की खुशबू भावुक आदमी के लहु में ही सबसे ज्यादा होती...तुम भावुक हो, तभी गर्वीली हो...तभी तुम्हारा मन उज्जवल है और शायद तभी तुम कायर नहीं हो...बीच..भँवर में खडी रहकर भी किसी काठ की नाव के लिए चीख-पुकार नहीं की तुमने।"[67]

---

[66] सकुबाई- नादिरा ज़हीर बब्बर, पृ.63

[67] सुनो शेफाली- कुसुम कुमार, पृ.48

यहाँ शेफाली का आत्मविश्वास ही उसे ज़िन्दगी में सहारा देता है।

4.2.17 नारी द्वारा अर्थोपार्जन

आज नारी पुरुष के बराबर ही समाज में सम्मानित है। पुरुष के समान ही अर्थोपार्जन के क्षेत्र में भी वह आगे बढ चुकी है। "नारी के अर्थोपार्जन के मूल में उनकी व परिवार की सहमति अत्यधिक मात्रा में रहती है। अर्थ के बना परिवार के सदस्य जिन इच्छाओं की पूर्ती कर पाने में असमर्थ रहते है, वह नारी के नौकरी करने के कारण पूर्ण हो जाती है। शिक्षित विवाहित स्त्री द्वारा नौकरी करने की जो लहर आई है, उसका उसमें संपूर्ण व्यक्तित्व, उसके दांपत्य जीवन तथा पारिवारिक संबंधों पर असर पडना अनिवार्य है। अब उसे एक ओर गृहिणी और दूसरी ओर जीविकोपार्जक दोनों की भूमिका निभानी पडती है। इस दोहरी भूमिका की परस्पर विरोधी आवश्यकताओं के बीच जूझना पडता है।"[68] जहाँ एक ओर नारी के कार्यस्थल पर काम का ज्याद बोझ कंध्ये पर रखता है वहीं नारी शरीर पर भी वासनात्मक दृष्टि रखी जाती है। 'दिल्ली ऊँचा सुनती है' नाटक में अलका पैंशन विभाग के कार्यालय में काम करती है। वहीं काम करनेवाला मिस्टर ए उस पर बुरी नज़र रखता है। मिस्टर ए अलका से ओछी बात करते हुए कहता है-

"मिस्टर ए : कलवाली पिक्चर में आपकी बडी याद आयी अलका जी।
अलका : मेरी याद क्यों आयी?
सोनी : (शरारत में) अब इसे रोज आपको देखकर उस पिक्चर की याद आया करेगी। कसम से, कभी इनकी याद...
अलका :बहुत जल्दी इस दफ्तर की नौकरी छोडकर जानेवाली हुँ।"[69]

---

[68] कामकाजी भारतीय नारी : बदलते जीवन मूल्य और सामाजिक स्थिति - डॉ. प्रेमिला कपूर, पृ.29

[69] दिल्ली ऊँचा सुनती है- कुसुम कुमार, पृ.183

'सकुबाई' नाटक में शहनाज़ के पति सड़क-दुर्घटना में मारे जाते है। शहनाज़ बेसहारा हो जाती है। अपनी विषम स्थितियों में निडर होकर अपना पर्दा छोडकर वह बाहर निकलती है। अपनी दूकान संभालती है और अपनी गृहस्थी को चलाती है। सकु इस पर कहती है-

> "इतनी अच्छी औरत....। फिर आ गए रिश्तेदार... दूकान हडपने...। दिन भर उसी का खाते थे और अब नहीं हारी....। वही औरत शहनाज जिसका नाम। पर्दा उठाया और निकल पडी मुर्दों की दुनिया में...। क्राफेड मार्केट में मर्दों के बीच... बच्चों से कहा- बच्चों तुम घर संभालों। मैं दूकान संभालती हुँ और फिर क्या दूकान चलि कि पूछे मत...एकदम दौडने लगी।..."[70]

अपने जीवन की बुनियादि ज़रूरतों को मिल पाने के लिए औरतों का अर्थोपार्जन-एक ज़रूरी बात रह गयी है। लेकिन इसी बीच उसे बहुत सारी तकलीफों को सामना करना भी पडा था।

4.2.18 दलित नारी का प्रतिशोध

संकुचित मनोवृत्ति और स्वार्थ के वशीभूत वैदिक काल उत्तरार्द्ध के आते-आते वर्ण व्यवस्था सिमटकर जाति व्यवस्था में परिवर्तित हो गयी। समाज में मनुष्य का स्थान और उसका सम्मान, उसके काम और उसकी उपलब्धी से नहीं बल्कि किस जाति और किस वर्ग में वह जन्म लेता है उससे आंकलन किया जाने लगा। इसी आंकलन में दलितों की गणाना की गयी है। जिससे समाज के मनोभावों में स्पष्ट भेद दिखाई पडता है। वस्तुतः कोई दलित होता नहीं, दलित पैदा होता है। दलित

---

[70] सकुबाई- नादिरा ज़हीर बब्बर, पृ.50

होना एक बंधन जैसा माना गया है। डॉ. भगवान दास कहार का कहना है कि- "दलित या शोषित वर्ग से तात्पर्य है एक ऐसे वर्ग,समूह या जाति विशेष का व्यक्ति अथवा वह जाति कि जिसके धन, संपत्ति, माल अधिकार एवं श्रम आदि का हरण किसी अन्य सत्ता-शक्ति-संपन्न वर्ग या जाति के द्वारा किया गया हो।"[71] दलितों को कमीने समझने वाले दलितेतरों पर प्रतिशोध चिरकाल से संपन्न है। कुसुम कुमार के 'सुनो शेफाली' में शेफाली हरिजन युवती है। शेफाली अपने दलित होने से कभी अपकर्ष दिखाती नहीं। इसके बदले दलितों पर देनेवाली सारी रियायतों पर आक्रोश उठाती है। क्योंकि ऐसी छूटें हरिजनों को एक विशेष-सामाजिक स्थिति प्रदान करती है जिसमें वह आजीवन बन्दी बन जाते है। शेफाली की बातें सुनें-

> "शेफाली : नहीं...गंभीर किस लिए? सब मुझसे रियायत ही रियायत करेंगे... फिर मुझे गम किस बात का? ...बचपन से लेकर अब तक घर से बाहर हर कदम पर रियायत ही रियायत सामने रखी मिलीं.....लेकिन हम तीनों बहनें कोई रियायत न लेती... हम क्यों कहें कि हमसे कोई ज्यादा है?"[72]

रियायतों की ओर मुँह मोडने वाली शेफाली अपनी जातीयता के नाम पर राजनीतिक उन्नति की ओर बढने में सत्यमेव दीक्षित को भी पराजित करती है। सत्यमेव अपने बेटे की शादी दलित शेफाली से कराकर, चुनाव में वोट बटोरने की सोच में था। लेकिन शेफाली अपनी जाति का लाभ उठाने को उद्धत सत्यमेव की आशाओं में पानी फेर दिया है। नाटक में शेफाली दलितोद्धार के नाम पर होनेवाले पाखंडों का पोल

---

[71] दलित साहित्य और सामाजिक न्याय - डॉ. पुरुषोत्तम सत्यप्रेमी, पृ.83

[72] सुनो शेफाली - कुसुम कुमार, पृ.22, 23

खोलती है। अपनी निचली आर्थिक, सामाजिक, वातावरण के बगैर वह प्रतिशोध करती है, जातिवाद के विरुद्ध।

4.2.19 नारी पर अत्याचार

पुरुष वर्चस्व समाज में नारी पर अत्याचार और एक कठोर सत्य है। ऐसा अत्याचार विशेष रूप से पति-पत्नि संबंधों में ही देखा जाता है। पति-पत्नि का संबंध एक सुन्दर ढाँचे में ढला हुआ है तो भी पुरुष प्रधान समाज की मानसिकता के कारण, अक्सर बिगड जाता है। मिथ्या आरापों के कारण, घर की चारदीवारी में वह पीडित होती है। महलिता शाक्तीकरण के इस युग में भी यह एक कटु सच्चाई है। ऐसा अत्याचार सिर्फ अनपढ और गरीब परिवारों में ही नहीं होते बल्कि पढे लिखे धनाढ्य लोगों के बीच भी ऐसा अत्याचार व्यापक है। 'सकुबाई' नाटक में सकुबाई इस पर कहती है-

> "सकुबाई- और फिर अनपढ लोग ही औरतों को नहीं मारते...पढे लिखे भी मारते हैं। एक दिन मेमसाहब को पता चल गया...और फिर वही हुआ...। उस दिन इतवार का दिन था। सुबह...सुबह काम पर आई तो देखा मेमसाब का मुँह सूजा हुआ है। (बाई आँख और गाल की तरफ इशारा करती है।) ऐसे...। ....ये सब सूजकर लेबल पर आ गया था।"[73]

मेमसाहब को पति से ताडना मिली है। नारी पर पुरुषों के कमीने आचरण का कोई देशकाल सीमा नहीं है। जब तक पुरुष वर्चस्व समाज से नहीं मिटेगा तब तक नारियों पर ऐसा अत्याचार ज़ारी रहेगा।

---

[73] सकुबाई- नादिरा ज़हीर बब्बर, पृ.39

निष्कर्ष

निष्कर्षतः हम कह सकते है कि हिन्दी साहित्य में स्त्री विमर्श चर्चा का विषय है। एक ओर स्त्री विमर्श एक नारा है तो दूसरी ओर गंभीर चिंतन का विषय है। आज स्त्री-साहित्य की अपनी विरासत भी लगभग निर्मित हो चुकी है जिसमें विमर्श एक बहुमूल्य मायना रखता है। हिन्दी के प्रमुख महिला नाटककार कुसुमकुमार और नादिरा ज़हीर बब्बर के नाटकों में स्त्री-विमर्श ज्यादा मुखरित है। साथ ही नारी की असफलताओं का भी मर्मस्पर्शी रूप से अंकन हुआ है। नारी स्वत्व का खोज तथा नारी के आत्मविश्वास और आत्मसम्मान भरी गाथाओं का भी सूक्ष्म विश्लेषण उनके नाटकों में हुआ है।

कुसुम कुमार के नाटकों में 'सुनो शेफाली', नारी के आत्मसम्मान, आत्मनिर्भरता तथा आत्मविश्वास को प्रत्यक्षरूप में उकेरता है। नाटक नारी जागरण की ज़रूरत पर ज़ोर देता है। नारी दलित हो, निम्नवर्ग की हो या अशिक्षित अपने आत्मसम्मान को कायम रखने को बाध्य है-जिसका प्रत्यक्ष स्वरूप 'सुनो शेफाली' में स्पष्ट परिलक्षित है। 'पवन चतुर्वेदी की डायरी' में सुषमा के माध्यम से अर्थाभाव से जूझने वाली, लेकिन आत्मसम्मान को संरक्षित रखने में अटल-अचल नारी का चित्रण है। अपने स्वतंत्र व्यक्तित्व के प्रति सजग नारियों का चित्रण इनके नाटकों में मिलती है। दलित और निर्धन नारी की विभिन्न समस्याओं का चित्रण कुसुम कुमार ने अपने नाटक 'सुनो शेफाली' तथा 'संस्कार के नमस्कार' जैसे नाटकों के माध्यम से किया है। निम्न मध्यवर्गीय औरतों की कष्टताओं को कुसुम जी ने 'दिल्ली ऊँचा सुनती है' तथा 'लश्कर चौक' में गौर किया है। उनके नाटक स्त्री-विमर्श के तहत पर सक्षम निकली है नादिरा ज़हीर बब्बर परंपराओं तथा रूढियों में तडपती नारी की

कहानी को हमारे सम्मुख खडा कर दिया है। कुसुम कुमार के समान नादिरा, जी भी व्यक्तिगत स्वतंत्रता के लिए संघर्षशील नारी को हमारे सम्मुख दर्शाती है। 'सकुबाई' नाटक में सकुबाई के ज़रिए के आत्मविश्वास की पराकाष्ठा दिखाते है तथा कैसे अपने प्रतिकूल परिस्थितियों से जूझना है, यह भी दिखाते है। 'जी जैसी आपकी मर्जी' जीवन के विविध पहलुओं की नारियों के ज़रिए स्त्री शाक्तीकरण का रास्ता खोलता है। प्रस्तुत नाटक के सभी पात्र स्त्री समस्याओं का यथार्थ बयान देते है जो आज की यथार्थता का सीधा चित्रण है। समस्याओं में दबे रहने के साथ-साथ, उनसे मुक्त होने की नारी की उत्कट इच्छा का स्पष्ट एहसास नाटक देते है। पुरुष प्रधान भारतीय समाज में नारी के विलाप को अंकित करने में दोनों नाटककार सफल निकले है। साथ ही विविध पहलुओं की नारियों के अदम्य साहस और मनोबल भी इनके नाटकों द्वारा व्यक्ति किया है। अतः हम कह सकते है कि हिन्दी नाटक साहित्य में स्त्रीविमर्श के परिप्रेक्ष्य में कुसुम कुमार और नादिरा ज़हीर बब्बर के नाटक सफल तथा सक्षम दीख पड़ते है।